# क्या कभी हमने स्वयं को जानने का प्रयास किया है ?

मनुष्य की  सदैव ही सबसे बड़ी अभिलाषा रही है कि विश्व ही क्या ब्रह्माण्ड तक को जानने के लिए जो कुछ भी हो सके किया जाये। ऐसी इच्छा होना नकारात्मक तो कदापि नहीं है क्योंकि Human quest for knowledge ने ही आज हमें प्रगति के उस स्थान तक पहुँचा दिया है कि हम उत्साहित होकर केवल कल्पना ही कर सकते हैं कि आगामी 20-50 वर्षों में मानव कहाँ पर होगा। इस प्रगति के सकारात्मक एवं नकारात्मक परिणाम हम सबके समक्ष हैं जिन्हे हम दिन-रात देखते हैं। सकारात्मक और नकारात्मक का तो चोली दामन का साथ रहा है, परम पूज्य गुरुदेव ने बहुत बार कहा है कि गगनचुम्बी भवन खड़ा करने के लिए गड्ढा तो खोदना ही पड़ेगा।

ज्ञानप्रसाद का आज का विषय ज्ञानप्राप्ति का तो है ही लेकिन अपने आस-पास की प्रगति केवल ज्ञान की न होकर अपनेआप को जानने की दिशा में है।

जैसा आरम्भ में ही लिखा है कि मनुष्य सारे विश्व/ब्रह्माण्ड को जानने की इच्छा के लिए प्रयास करता रहता है, केवल इच्छा ही नहीं बहुत कुछ जानता भी है लेकिन अधिकतर मनुष्य "स्वयं को नहीं जानते" जानते ही नहीं, बल्कि जानना ही नहीं चाहते। खुद को जानना ही विश्व की सबसे बड़ी नियामत है, वरदान है। अगर हम स्वयं को ही नहीं जानते तो दूसरों को कैसे जान पाएंगें। दूसरों को जानने के लिए पहले खुद को जानना अति आवश्यक है। इसीलिए हमारे बड़े बुज़ुर्ग, चिंतक, महर्षि कहते आये हैं कि पहले स्वयं को जानने

का प्रयास करो, अपने से ही  शुरुआत करो, this is the starting point. आदरणीय चिन्मय जी के उद्बोधनों में स्वयं  को जानने के सिद्धांत को बार-बार दोहराया गया है, उन्होंने बार-बार “अंदर से आवाज़” निकलने की बात कही है। किस अंदर की बात  कही गयी गयी है ? क्या हमारी  स्थूल काया, जो हुईं दिख रही है, उसके अंदर की बात कर रहे हैं, बायोलॉजी के विद्यार्थी जानते ही होंगें की स्थूल काया के अंदर तो digestive system, circulatory system, nervous system एवं कई और systems का जाल बिछा हुआ है जो अपने-अपने कार्य एक नियमित ढंग से, अनवरत पूर्ण किये जा रहे हैं। चिन्मय जी “शायद” अंतरात्मा की बात कर रहे हैं।

परम पूज्य गुरुदेव ने अपनी प्रथम पुस्तक “मैं क्या हूँ” में स्वयं  को जानने का मार्गदर्शन दिया  है। हम में से बहुतों ने इस पुस्तक का स्वाध्याय भी अवश्य ही किया होगा, इसे समझने का प्रयास भी किया होगा लेकिन स्वयं  को जानने के लिए इस पुस्तक से भी सरल युगतीर्थ शांतिकुंज स्थित विश्व का एकमात्र unique मंदिर “ भटका हुआ देवता” बहुत ही सहायक है। गायत्री मंदिर के बगल में स्थित इस अद्‌भुत मंदिर में पांच फुल साइज दर्पण हैं जिनमें हम अपना प्रतिबिम्भ तो देखते ही हैं लेकिन हर दर्पण के साथ ही मानव के अस्तित्व का वर्णन दिया गया है कि वास्तव में “मैं क्या हूँ”। इसी explanation को दर्शाते हमने दो चित्र आज के ज्ञानप्रसाद के साथ अटैच किये हैं।

हमारी डेली लाइफ में से स्वयं को जानने का एक उदाहरण:

कोई महात्मा अपनी साधना में मग्न थे, किसी ने द्वार खटखटाया। महात्मा ने अंदर से ही  पूछा-कौन?  उत्तर मिला-यही तो जानने आया हूँ कि मैं कौन हूँ,स्वयं को जानने आया हूँ।  महात्मा ने कहा-चले आओ, तुम ही वह अज्ञानी हो, जिसे ज्ञान की आवश्यकता है।

यहीं से आरम्भ होती है जीवन की यात्रा। स्वयं को जानना अत्यंत आवश्यक है। जो स्वयं  को नहीं जानता,वह अन्य  किसी को जानने का दावा कैसे कर सकता। अक्सर लोग झगड़ते हुए कहते हैं- तू नहीं जानता कि मैं कौन हूँ, मैं क्या-क्या कर सकता हूँ। इसके जवाब में सामने वाला भी आग बबूला होकर यही

कहता है कि तू मुझे नहीं जानता कि मैं कौन हूँ।  वास्तव में वे दोनों ही स्वयं  को नहीं जानते, इसलिए ऐसा कहते हैं।

हम में से बहुत ही कम होंगें जिन्होंने कभी यह जानने का प्रयास किया होगा कि “खुदा” और “खुद” में क्या अंतर्  है। जिसने खुद को जान लिया, उसने खुदा को जान लिया और जानने के बाद किसी को प्राप्त करना बहुत ही सरल हो जाता है। बाज़ार में आम खरीदने से पूर्व आम की वैरायटी को जानने का प्रयास करते हैं। हालाँकि ईश्वर की  आम से तुलना  करना कोई समझदारी नहीं है लेकिन जिस सन्दर्भ में बात हो रही है उसमें कहा जा सकता है हमारे आस पास ही ईश्वर हर वैरायटी में विध्यमान है,उसकी सत्ता को  जानना

हमारा कर्तव्य है, एक बार हम यह जान गए तो प्राप्त करना बहुत ही सरल है। इस स्टेज पर पहुंचते ही हम ईश्वर को अपने अंदर, अपने अंतःकरण में ढूंढने का प्रयास करते हैं। इसलिए पुराणों में भी कहा गया है कि ईश्वर हमारे ही भीतर है,उसे ढूँढने की कोई आवश्यकता नहीं।

“भटका हुआ देवता” मंदिर में दर्पण के साथ explanation यही बता रहे हैं।

“यह सारी चर्चा दो महत्वपूर्ण प्रश्नों के इर्द-गिर्द केंद्रित है। पहला बेसिक प्रश्न है कि स्वयं  को जाना कैसे जाए और दूसरा है कि स्वयं  को जानने से क्या लाभ होगा।”

प्रश्न तो दोनों ही कठिन हैं, लेकिन उतने कठिन नहीं, जितना हम सोचते हैं। हम में से कोई ऐसा नहीं होगा जिसके जीवन में ऐसे कोई  पल न  आएँ हों जब हमने स्वयं  को कठिनाइओं  से घिरा पाया हो। यह ऐसे क्षण होंगें जब समाधान तो क्या दूर-दूर तक शांति भी दिखाई नहीं देती। स्वयं को जानने के, स्वयं को पहचानने के लिए ऐसे ही क्षण होते हैं । वैसे तो इंसान के लिए हर क्षण परीक्षा की घड़ी होती है लेकिन ऐसे क्षणों में ईश्वर उस high level की परीक्षा लेते हैं जिसे हम unannounced unit test की संज्ञा दे सकते हैं। परेशानियाँ मनुष्य के भीतर की शक्तियों को पहचानने के लिए ही आती हैं, मनुष्य को स्वयं के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए ही आती हैं। कठिनाईं के

उन क्षणों  का स्मरण आते ही हम स्वयं के बारे में जान पाते हैं कि कितनी कुशलता से उस स्थिति का  सामना किया गया था।  एक-एक क्षण  भारी पड़ रहा था लेकिन हम उस स्थिति से बाहिर निकलने में सफल हो पाए थे।  उस स्थिति का स्मरण आते ही आज शायद सिहरन अवश्य हो लेकिन उस समय तो हम एक  एक कुशल योद्धा थे, एक ऐसा योद्धा जिसने अपने पराक्रम से वह युद्ध जीत लिया।

वास्तव में मुसीबतें एक शेर की तरह होती हैं, जिसकी पूँछ में समाधान लटका होता है. लेकिन हम शेर की दहाड़ से ही इतने आतंकित हो जाते हैं कि समाधान की तरफ हमारा ध्यान ही नहीं जाता।

अगर  हम यह सोचें कि अगर हम जीवित हैं, तो उसके पीछे कुछ न कुछ कारण तो होगा  ही क्योंकि Everything happens for a reason. यदि शेर ने हमें जीवित छोड़ दिया, तो निश्चित ही हमारे जीवन का कोई और उद्देश्य है। उस समय यदि हम शांति से उन परिस्थितियों को जानने का प्रयास करें, तो हम पाएँगे कि हमने उन क्षणों का साहस से मुकाबला किया।

यहीं  से हमें प्राप्त होता है "आत्मबल" और शुरू होता है खुद को जानने का सिलसिला जिसे हम "आत्म परिचय" का नाम देते हैं।

हम स्मरण  करें उन क्षणों  के साहस को, हमने कितनी सूझबूझ का परिचय दिया था।  आज भी यदि मुसीबतें हमारे सामने आईं हैं, तो यह जान लेना चाहिए कि  वह

हमें किसी परीक्षा के लिए तैयार करने के लिए आईं हैं। हमें उस परीक्षा से जूझना ही है यानि स्वयं की शक्ति को पहचान कर हमें आगे बढ़ना है क्योंकि जीवन आगे बढ़ने का नाम है, जीवन चलने का नाम है। बॉलीवुड की सुप्रसिद्ध फिल्म “शोर” का महेंद्र कपूर जी का गाया बहुचर्चित गीत “जीवन चलने का नाम, चलते रहो सुबह शाम” इसी तथ्य को सार्थक करता है।

यह बात हमेशा याद रखें कि जिसने परीक्षा में अधिक अंक लाएँ हैं, उन्हें और परीक्षाओं के लिए तैयार रहना है. जो फेल हो गए, उनके लिए कैसी परीक्षा और काहे की परीक्षा। याद रखें मेहनत का अंत केवल सफलता नहीं है, बल्कि सफलता के बाद एक और कड़ी मेहनत के लिए तैयार होना है, बस।

## तुम जानते नहीं मैं कौन हूँ ?

हमारे दैनिक जीवन में अनेकों बार यह  वाक्य "तुम जानते नहीं मैं कौन हूँ, मैं तुम्हारा कुछ भी कर सकता हूँ।" बोलने वाले लोग मिले होंगें।  ऐसे लोगों को स्वयं ही पता नहीं होता कि वह कौन हैं। शायद लोगों से पूछ रहे होते हैं "बताएं मैं कौन हूँ" और जिन को धमका रहे होते हैं उनमें से बहुत कम को शायद मालूम हो कि वह कौन हैं। ऐसा कहना उचित लग रहा है कि यह आत्मज्ञान और आत्मपरिचय का विषय है जिसे समझना इतना सरल नहीं है, लेकिन यह प्रश्न हमारे जीवन का सबसे गूढ़ प्रश्न है क्योंकि इसे समझ  लेने पर बहुत से काम सरल हो जाते हैं। स्वयं को जानना ही सबसे पहला और सबसे आवश्यक तथ्य  है जो हमें अपने

जीवन में उतारना चाहिए। अपने स्वयं की और संकेत करके पूछिए “यह कौन है, इसका क्या अस्तित्व है, इसके अस्तित्व की प्रकृति क्या है? अगर हम अपने अस्तित्व की प्रकृति नहीं जानते तो फिर हम संयोग से (chance) ही जी रहे हैं। सब कुछ संयोग-वश, और धारणाओं के आधार पर ही हो रहा है ।

"मैं कौन हूं?" प्रश्न  कोई प्रयोग या जिज्ञासा मात्र नहीं है। यह एक ऐसा प्रश्न है जो हमें  अपने शरीर की dissection करने के लिए विवश कर देता  है। जब तक यह विवशता  चीर कर हमारे दो टुकड़े न कर दे, तब तक हम  जान ही नहीं  पाएंगे कि हमारे  अंदर कौन है।

आप ज़रा  सोच कर देखें कि आपको जिस  कार्य की जानकारी भली प्रकार होती है आप उस कार्य  को

बेहतर तरीके से कर पाते हैं। छोटे बच्चे को जब प्राथमिक कक्षाओं में विद्या प्राप्त करने के लिए विद्यालय में भेजा जाता है तो सबसे बड़ी समस्या बच्चे के aptitude की आती है। Aptitude को इंग्लिश में कौशल कहते हैं। अगर इसे प्राकृतिक कौशल Natural aptitude  कहें तो शायद अधिक बेहतर होगा। एक ऐसा कौशल जो भगवान उपहार की भांति देकर हमें इस धरती पर भेजते हैं। कई बार तो यह कौशल जन्म के बाद कुछ ही वर्षों में बच्चे में प्रकट होने लगते हैं तो कई बार सारा जीवन भी दिखाई नहीं देते।

पहली स्थिति वाले बच्चे जिनमें  स्पेशल qualities प्रारंभिक वर्षों में प्रकट होने लगती हैं, वही बच्चे मानव से महामानव बनते हैं और उन्हें भगवान ने किसी

स्पेशल reason से ही इस धरती पर भेजा है। इस तथ्य को इतिहास के कितने ही उदाहरणों से परखा जा सकता है लेकिन  जीवंत उदाहरण तो हमारे गुरुदेव स्वयं ही हैं जिनका इस धरती पर अवतरण किसी विशेष उद्देश्य के लिए हुआ था। गुरुवर द्वारा की गई जीवन लीलाओं से हम भलीभांति परिचित हैं,उन्होंने स्वयं को जाना,स्वयं को पहचाना और जो कुछ कर डाला, हम सबके के समक्ष है।

हम स्वयं को जानने का प्रयास कर रहे हैं,इसी जानने को इंग्लिश में कहते हैं Know yourself. जब विद्यार्थी जीवन की बात कर रहे हैं, aptitude की बात कर रहे हैं तो अक्सर कहा जाता है Know your potentials, know your traits, know your strengths and

weaknesses. तो स्वाभाविक सी बात है कि स्वयं को जाने बिना इन बातों का ज्ञान कैसे हो सकता है। जिन्हे भी  इन बातों का ज्ञान हो जाता है वही सफलता के शिखर पर पहुंच पाते हैं। जब हम स्वयं को जान लेते हैं तो हम "वह कुछ" कर लेते हैं जो हमें स्वयं को भी पता नहीं होता। "वह कुछ" को हमने विशेष ज़ोर देकर लिखा है क्योंकि उस स्थिति में ईश्वर भी हमारे साथ होते हैं और जब ईश्वर का साथ हो तो कुछ भी हो सकता है। God helps those who help themselves, केवल प्रचार के लिए ही तो नहीं है,इसका सच में अस्तित्व है।

विद्यार्थी की दूसरी स्थिति जिसमें aptitude का ज्ञान ही नहीं हो पाता, जीवन एक बोझ बन जाता है। यह कर लो, वोह कर लो,वाली स्थिति बन जाती है ।बच्चा

बनना चाहता है wildlife photographer लेकिन माता पिता उसे इंजीनियर देखना चाहते हैं। है न कैसी विडंबना! माता पिता भविष्य का निर्णय ले रहे हैं। हमारे ऑनलाइन ज्ञानरथ गायत्री परिवार में बहुत सारे वरिष्ठ, सूझवान, अनुभवी parents होंगें, लेकिन वर्षों का अनुभव,सूझबूझ और बच्चों के aptitude अगर साथ-साथ चलें तो कुछ भी संभव हो सकता हैं। कुछ ऐसी ही स्थिति मनुष्य  जीवन की भी है।जो मनुष्य स्वयं को नहीं जान पाते  उनके जीवन की  डोर किसी और के हाथ में होती है  लेकिन दूसरी तरफ जो मनुष्य स्वयं को जान पाते हैं, अपनी strengths and weaknesses को  जान पाते हैं इनकी  डोर ईश्वर के हाथ में होती है।

गुरुदेव का ही कथन है "ईश्वर को अपना नौकर बना लो"  गुरुवर कहते हैं कि ईश्वर में इतना समर्पित हो जाओ कि वह भक्त के लिए दौड़ा चला आए।

इंटरनेट के माध्यम से स्वयं को पहचानने के लिए भांति भांति के tools उपलब्ध हैं लेकिन निम्नलिखित tools को जानना भी कोई हर्ज़ नहीं है :

1.अंदर की आवाज को पहचानें (Recognize the inner voice):

अपने आपको पहचाने के लिए सबसे पहले अपने अंदर की आवाज़  को सुनना होगा। जिस प्रकार एक छोटे से बीज में बड़ी-बड़ी संभावनायें छिपी होती हैं,उसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर भी अनन्त संभावनायें विद्यमान

होती हैं। बस संकल्प रूपी बीज को आत्म-विश्वास की भूमि  में सकारात्मक सोच के साथ रोपते हुए श्रम की बूंदों से सीचने की आवश्यकता होती है। जिस बीज  को लगाया जा चुका हैं, उसका पौधा भी बनेगा और विशाल वृक्ष भी बनेगा। भूल जाइए कि आप कम पढ़े-लिखे हैं या आपको तकनीकी शिक्षा का ज्ञान  नहीं है।

2.आगे बढ़ते रहने की आदत(Habit of moving forward):

स्वयं को  पहचानने  के लिए  आपको अपने रास्तों  पर सदैव आगे ही  बढ़ते रहना होगा।  तनिक  हिसाब तो लगाइए कि अब तक अपने जीवन  में आपने कितनी चीज़ों को प्राप्त किया है।  जब आप यहाँ तक आ पहुँचे हैं, तब यहाँ से आगे बढ़ते रहने में कौन सी कठिनाई है।

याद रखें, आपकी क्षमताओं का मूल्यांकन  आपके इलावा  कोई दूसरा नहीं कर सकता।

3. अपने होने के कारण को पहचानें (Know the reason of your existence ):

अपने आपको पहचानने से पहले याद रहे, सफलता आपके कारण है, सफलता के कारण आप नहीं हैं।  अपने आपको जानना, सुनना और मानना ही सबसे बड़ी सफलता है। जब तक अविश्वास और आशंकाएं हैं, तब तक स्वयं को जान पाना कठिन ही है।  अपने आन्तरिक संचार-तन्त्र ( Internal communication system) को पहचानिए, सही वक्त पर सही संदेश प्राप्त करने की आदत डालिए और इसके लिए आपको ध्यान के माध्यम से अपने भीतर उतरना होगा.

4.स्वयं को अलग( unique ) समझें  (Consider yourself unique ):

यह किसने कह दिया कि आप एक 'साधारण' व्यक्ति हैं, यहाँ हर व्यक्ति 'असाधारण' ही है।  वस्तुतः मनुष्य-जन्म ही अपनेआप में एक अद्भुत एवम् असाधारण घटना है लेकिन  दुर्भाग्यवश तथाकथित साधु-सन्त और धर्म के ठेकेदार अपने अतिरिक्त अन्य सभी को साधारण श्रेणी में रखते हैं और 'असाधारण' होने के लिए अपनी शरण में आने की शर्त रखते हैं। ऐसे चालाक लोगों से हमें बचना चाहिए। स्मरण रहे कि  एक मशीन पचास साधारण व्यक्तियों का कार्य कर सकती है, किन्तु पचास मशीनें मिलकर भी एक असाधारण व्यक्ति का कार्य नहीं

कर सकतीं क्योंकि इन मशीनों का अविष्कारक भी एक असाधारण व्यक्ति ही तो है।

5.दूसरों से तुलना क्यों करना(Why compare with others):

जब बनाने वाले ने आपको एक परिपूर्ण एवम् सबसे अलग कैरेक्टर दिया है, तब दूसरों से तुलना करने की आवश्यकता ही क्या है ? जब सभी लोगो की शारीरिक अनुकृति, प्रवृत्ति, अनुभूति, यहाँ तक कि अंगूठे-अंगुलियों की छाप तक एक-दूसरे से अलग एवम् अनूठी होती हैं, तब सफलता के किन्हीं दो व्यक्तियों की कार्यप्रणाली या कार्य प्रगति एक सी कैसे हो सकती है ?

यदि हमें अपने “आपे” को प्रयोग करना आ गया  तो हम दूसरे ईश्वर बन सकने में समर्थ होते है।

संसार में जानने को बहुत कुछ है, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण जानकारी स्वयं को जानने  की है। स्वयं को जान लेने के बाद  बाकी जानकारियां प्राप्त करना सरल हो जाता है। ज्ञान प्राप्त करने  का आरंभ “आत्मज्ञान” से होता है। जो अपने को नहीं जानता, वह दूसरों को क्या जानेगा?

आत्मज्ञान जहाँ कठिन है, वहाँ सरल भी बहुत है। दूसरी वस्तुएं दूर भी है और उनका सीधा सम्बन्ध  भी स्वयं से नहीं है। संसार में बिखरे हुए  ज्ञान को पाने  और जानने के लिए कोई माध्यम तो चाहिए  और वह माध्यम हम स्वयं ही हैं यानि हमारा “अपना आपा” ( our self not

ourself ) जो सबसे निकट है, हम उसके स्वामी हैं।
जन्म से लेकर अंत तक उसमें समाए हुए है। इस दृष्टि से
“आत्मज्ञान” सबसे सरल भी है। शोध करने योग्य एक
ही तथ्य है, आविष्कृत किए जाने योग्य एक ही
चमत्कार है, यह है “अपना आपा”, जिसे पाने के बाद
और कुछ पाना शेष नहीं रह जाता।

बाहर की चीजें ढूंढ़ने में मन इसलिए लगा रहता है कि
“अपने आपे” को ढूंढ़ने के झंझट से बचा जा सके,
क्योंकि आज जिस स्थिति में हम हैं,उसमें अंधेरा दिखता
है और अकेलापन अनुभव होता है। यह एक डरावनी
स्थिति है। सुनसान को कौन पसंद करता है? खालीपन
किसे भाता है? मनुष्य ने स्वयं ही अपने को डरावना
बना लिया है और उससे भयभीत होकर स्वयं ही

भागता है। इसीलिए अपने को देखने, खोजने और समझने की इच्छा नहीं होती और मन बहलाने के लिए बाहर की चीजें खोजता फिरता है। कैसी है यह विडंबना !इस खालीपन से बचने के लिए  व्हाट्सप्प के अलग अलग ग्रुप बनाए फिरता है,हज़ारों लाखों फेसबुक फ्रेंड्स बनाए फिरता है, और न जाने क्या कुछ हमें तो अनेकों सोशल मीडिया साइट्स के नाम तक नहीं मालूम।

क्या सच में हमारे  भीतर अंधेरा है?

कबीर जी के दोहे "कस्तूरी कुंडल में बसे मृग ढ़ूँढ़ै बन माहि। ऐसे घटी-घटी राम हैं दुनिया जानत नाँहि॥" से कौन परिचित नहीं है। इसी दोहे में छिपा है यह तथ्य कि अँधेरा भीतर नहीं है। स्वयं से पूछें कि क्या सच में हमारे भीतर अंधेरा है? क्या सच में  हम अकेले और

सूने है? उत्तर है बिल्कुल नहीं, प्रकाश का ज्योतिपुंज हमारे भीतर विद्यमान है और एक पूरा संसार ही हमारे भीतर विराजमान है। उसे प्राप्त करने के लिए और देखने के लिए आवश्यक है कि हमारा मुँह अपनी ओर हो। पीठ फेर लेने पर तो सूर्य भी दिखाई नहीं देता और हिमालय तथा समुद्र भी दिखना बंद हो जाता है। फिर अपनी ओर पीठ करके खड़े हो जाएं तो शून्य (खालीपन) के अतिरिक्त और दिखेगा भी क्या ?

बाहर केवल जड़ जगत (चेतना रहित संसार) है, पंचभूतों का बना हुआ निर्जीव ।बहिरंग दृष्टि लेकर तो हम मात्र जड़ता ही देख सकेंगे। अपना जो स्वरूप आँखों से दिखता है,कानों से सुनाई पड़ता है वह जड़ है। ईश्वर को भी यदि बाहर देखा जाएगा तो उसके रूप में जड़ता

या माया ही दृष्टिगोचर होगी। अंदर जो है, वही सत है। इसे अंतर्मुखी होकर देखना पड़ता है। आत्मा और उसके साथ जुड़े हुए परमात्मा को देखने के लिए अंतर्दृष्टि (insight) की आवश्यकता है। इस प्रयास में अंतर्मुखी हुए बिना काम नहीं चलता।

स्वर्ग, मुक्ति, सिद्धि, शाँति आदि विभूतियों की खोज में कही अन्यत्र जाने की जरूरत नहीं है बाहर भरी हुई जड़ता में चेतना कैसे पाई जा सकेगी? जिसे ढूंढ़ने की प्यास और पाने की चाह है, वह तो भीतर ही भरा पड़ा है। जिसे कुछ मिला है, यहीं  से मिला है। कस्तूरी वाला हिरन तब तक भागता रहेगा और अतृप्त फिरता रहेगा,जब तक अपने ही नाभिकेंद्र में कस्तूरी की सुगंध सन्निहित होने पर विश्वास न करेगा। बाहर जो कुछ भी

चमक रहा है, सब अपनी ही आंखों और प्रकाश का प्रतिबिंब मात्र है।

इसीलिए कहा जाता है कि अपने आपको जानो, अपने को प्राप्त करो और अमृतत्व में लीन हो जाओ। इसी तथ्य को ऋषियों ने बार-बार दोहराया है और तत्वज्ञानियों ने कहा है कि जो तुम्हे बाहर दिख रहा है, वह भीतरी तत्व का ही विस्तार है। अपना “आपा” जिस स्तर का होता है, संसार कर स्वरूप भी वैसा ही दिखता है। बाहर हमें जैसा देखना पसंद हो, उसे भीतर से खोज निकालो । यह अन्वेषण( exploration) की चरम सीमा है।

दुःख, दारिद्रय, शोक, संताप और अभाव का निवारण करने के लिए अंतरंग में जमी हुई जड़ों को खोदना

पड़ता है। भीतर का दीपक जलने पर ही बाहर फैले हुए अंधकार का समाधान होगा। जो कुछ हमारे लिए अभीष्ट और आवश्यक है, उसकी समस्त संभावनाएं अपने भीतर सुरक्षित रखी हुई है। आवश्यकता है तो केवल उन्हें प्रयोग करने की। यदि हमें अपने आपे को प्रयोग करना आ गया तो हम दूसरे ईश्वर बन सकते हैं। अपने को खोकर हमने खोया ही खोया है। बाहर ढूंढ़ने में जीवन गवा डाला, पर मिला कुछ नहीं, मिलता तो तब, जब बाहर कुछ होता।

अनात्म तत्वों ( आत्मा रहित ,जड़ पदार्थ ) के कारण जो गंदगी हमारे भीतर भर गई है, उसे निकाल दें तो शेष वही रह जाता है जो हमारा स्वरूप है। कुछ पाने के लिए खोना तो पड़ता ही है। आत्मिक शांति के लिए ही

कठिन  तप साधन किए जाते हैं। आत्मा तो स्वयं उपलब्ध ही है, उसे पाने के लिए कुछ अधिक करना ही नहीं पड़ता। बात तो केवल  इतनी ही है कि जो अनुपयुक्त और अवांछनीय (कूड़ा कर्कट) अपने भीतर भर लिया है, उसे निकाल कर फेंक दे। यह परिशोधन (cleaning, purging) ही उपलब्धि का निमित्त बन जाता है।

किसी तत्ववेत्ता से जिज्ञासु ने पूछा, " गुरुदेव ! तप साधना से आपने क्या पाया?" उन्होंने उत्तर दिया, "खोया बहुत, पाया कुछ नहीं ।" जिज्ञासु ने आश्चर्य से पूछा, "ऐसा क्यों?" ज्ञानी ने कहा, "जो पाने लायक था, वह तो पहले से ही प्राप्त था। जो खोने लायक विषय विकार और अज्ञान अंधकार के अनात्म तत्व भीतर घुस

पड़े थे, उन्हें साधना ने निकाला भर है। अपने आपको खाली कर लिया।" इस तरह साधक साधना में खोता ही खोता है, पाता कुछ नहीं। अगर हम स्वप्नों में ही खोये रहेंगें तो सत्य का कैसे पता चलेगा। सत्य  को जानने के लिए नींद से बाहिर आना पड़ेगा,स्वप्नों से निकलना पड़ेगा।

महर्षि रमण ने कहा है, “ अपने को जानने का प्रयत्न करो। अपने स्वरूप को समझो और जिस लिए जन्मे हो, उस पर विचार करो। तुम्हें दिशा मिलेगी और सही दिशा में कदम उठ गए तो वह प्राप्त करके रहोगे, जिसके पाए बिना अपूर्णता और अतृप्ति घेरे ही रहेगी।"

स्वामी विवेकानंद इस संदर्भ में एक कथा सुनाया करते थे, कहानी इस तरह से है।

एक फिलॉस्फर अपनी पत्नी से कह रहे थे- संध्या आने वाली है, काम समेट लो। उनकी कुटिया के पीछे एक सिंह  यह सुन रहा था। उसने समझा संध्या कोई बड़ी शक्ति है, जिससे डरकर यह निर्भय रहने वाले ज्ञानी भी अपना सामान समेटने को विवश हुए हैं । सिंह चिंता में डूब गया। उसे संध्या का डर सताने लगा। पास के घाट का धोबी दिन छिपने  पर अपने कपड़े समेटकर गधे पर लादने की तैयारी करने लगा। देखा तो गधा गायब।उसे ढूंढ़ने में देर हो गई। रात घिर आई और पानी बरसने लगा। धोबी को एक झाड़ी में खड़खड़ाहट सुनाई दी, समझा गधा है, सो लाठी से उसे पीटने लगा। अरे धूर्त यहां छिपकर बैठा है। छिपकर बैठा शेर डर से थर-थर कांपने लगा। धोबी उसे घसीट लाया और कपड़े लादकर

घर चल दिया।रास्ते में एक दूसरा सिंह मिला। उसने अपने साथी की दुर्गति देखी तो पूछा, यह क्या हुआ, तुम इस प्रकार लदे क्यों फिर रहे हो। सिंह ने कहा," संध्या के चंगुल में फंस गए हैं। यह बुरी तरह पीटती है और इतना वजन लादती है।" सिंह को कष्ट देने वाली संध्या नहीं, उसकी ग़लतफ़हमी थी, जिसके कारण धोबी को कोई बड़ा देव दानव समझ लिया गया और उसका भार एवं प्रहार बिना सिर हिलाए स्वीकार कर लिया ।

यह तो मात्र एक दृष्टांत है, यही हमारी  स्थिति है।अपने वास्तविक स्वरूप को न समझने और संसार के साथ, जड़ पदार्थों के साथ अपने संबंधों का ठीक तरह तालमेल न मिला सकने की गड़बड़ी ने ही हमें उन विपन्न परिस्थितियों में धकेल दिया है, जिनमें अंधकार के

अतिरिक्त और कुछ दिखता ही नहीं। इस भ्रांति को ही "माया" कहा गया है। माया को ही बंधन कहा गया है और दुःखों  का कारण बताया गया है। यह माया और कुछ नहीं, वास्तविकता से अपरिचित रखने वाला अज्ञान ही है।

हम अपनेआप को जानने का प्रयास कर रहे हैं ,क्या हम इस प्रयास में सफल हो पाए ?क्या हमें कुछ लाभ हुआ ? क्या हम अपनेआप को जानने में सफल हो पाए ?क्या हमें सबकुछ समझ आ गया ? क्या आज इस  विषय का समापन करते हुए हम कह सकते हैं कि अब THE END हो जाना चाहिए क्योंकि बार- बार यही रटते आ रहे हैं "स्वयं को जानों, स्वयं को पहचानों" अगर हमसे इस विषय की सफलता के बारे में पूछा जाये तो हमारा

व्यक्तिगत उत्तर “न” ही होगा। “न” कह कर हम अपनी यां  किसी की योग्यता/परिश्रम पर शंका नहीं कर रहे हैं, ऊँगली नहीं उठा रहे हैं। तो फिर समस्या क्या हैं ? समस्या केवल यही है कि स्वयं को जानने का विषय बहुत ही विशाल है, अनंत है, इसका कोई अंत नहीं है और हमारा लेवल इतना low है क़ि इस विषय को समझने के लिए कई वर्षों का समय चाहिए। हम तो मात्र नर्सरी के वोह विद्यार्थी हैं जो अभी नियमितता से, ध्यान लगाकर अध्यापक को सुनने का अभ्यास कर रहे हैं । अध्यापक द्वारा दिया गया दैनिक होमवर्क करने के लिए भी मम्मी की सहायता और दुलार की आवश्यकता है। ऐसी है हमारी स्थिति। अभी तो केवल बैकग्राउंड ही बनी है।

शायद यह कहना गलत न हो कि इस विशाल टॉपिक को समझने के लिए बार-बार पढ़ना चाहिए, नोट्स बनाने चाहिए, cheat sheets आदि बनाने चाहिए। इतना तो जानने को मिला ही है कि हम परमसत्ता ईश्वर के ही अंश हैं, हम उस परमसत्ता के राज कुमार हैं, हम ईश्वर की सर्वोत्तम कलाकृति हैं। वह परमसत्ता, supernatural power, कहीं बाहिर नहीं है, अपने भीतर ही है, हर क्षण हमारे साथ ही है। आवश्यकता है तो केवल उस परमसत्ता को जानने की, पहचानने की। आदरणीय चिन्मय पंड्या जी के  अपने भीतर झाँकने वाले सिद्धांत को पाठक फिर से स्मरण कर लें तो उचित ही होगा।

इतना ज्ञान होने के बावजूद मुर्ख मनुष्य ईश्वर को मंदिरों आदि में ढूंढ रहा है, नाक रगड़ रहा है, भिक्षा मांग रहा है, तरह- तरह की मनौतियां कर रहा है, ईश्वर से सौदेबाज़ी कर रहा है, ईश्वर तू मेरा कार्य कर दे तो मैं इतने का प्रसाद भेंट करूँगा,तू इतना निर्दय कैसे हो सकता है, मैंने आज तक तेरे से कुछ नहीं माँगा आदि आदि। इतनी ड्रामेबाज़ी के बाद जब कुछ भी नहीं हो पाता तो ईश्वर से युद्ध करने को तैयार हो जाता है। हम उसे मुर्ख इसलिए कह रहे हैं कि उसे परमपूज्य गुरुदेव का “बोओ और काटो” का सिद्धांत जो बिल्कुल सीधा और सरल है वह ही समझ नहीं आया और डींगें मार रहा है बड़ी बड़ी। अरे मुर्ख ईश्वर के खेत में बीज तो बिखेर ले, इन बिखरे हुए बीजों को सींच तो ले, कोंपलें

तो आने दे, फल आने तक प्रतीक्षा तो कर, पर नहीं, मुझे तो इंस्टेंट चाहिए ,यह इंस्टेंट का युग है। इस मुर्ख को गुरुदेव का दूसरा सिद्धांत "तू मेरा कार्य कर, बाकि सब मुझ पर छोड़ दे" भी भूल गया। अरे मुर्ख क्या तूने पहले ईश्वर के इस विराट ब्रह्माण्ड में कोई सत्कर्म किया जो चल पड़ा है भीख मांगने। अरे तुझे तो कबीर जी का दिव्य भजन भी भूल गया :

"मोको कहां ढूंढे रे बंदे, मैं तो तेरे पास में ।ना तीरथ में ना मूरत में, ना एकांत निवास में ।ना मंदिर में, ना मस्जिद में,ना काबे कैलाश में । मैं तो तेरे पास में ।मोको कहां ढूंढे रे बंदे, मैं तो तेरे पास में ।"

अगर मनुष्य को इन तथ्यों का ज्ञान हो जाए, जो हमें पिछले तीन दिनों में कुछ बेसिक लेवल का हुआ है तो

ईश्वर दूर नहीं है। ईश्वर सदैव हमारे साथ है, आवश्यकता है तो केवल सच्चे निर्मल मन से बुलाने की। एक बार बुलाकर तो देख मुर्ख कैसे भागते हुए आयेंगें । सूर्य देवता जिसे वैज्ञानिक star (न कि planet) कहते हैं,148 मिलियन किलोमीटर दूर होने के बावजूद केवल 8 मिंट में अपना प्रकाश धरती पर पहुंचा देते हैं। ऐसा इसलिए है कि प्रकाश किरणे एक सेकंड में 3 लाख किलोमीटर की यात्रा कर लेती हैं। यह Figures  देकर हम अपने पाठकों को किसी भी प्रकार से भ्रमित नहीं कर रहे क्योंकिविज्ञान  के बारे में हर किसी का ज्ञान अलग हो सकता है। लेकिन एक बात तो बहुत ही स्पष्ट है कि एनर्जी का भंडार सूर्य, जिसे हम शक्ति भी कहते हैं, सूर्य देवता भी कहते हैं, सविता देवता भी है ,ईश्वर

भी है, हमारे कितना पास है, हमारी आत्मा में, तन मन में, पेड़ पौधों में-यानि omnipresent है।

अब तक की चर्चा केवल ईश्वर के अस्तित्व को  समझने के प्रयास से की गयी है। हम कहते तो आये हैं कि ईश्वर हमारे पास हैं, ईश्वर  हमारे अंदर हैं तो यह  वैज्ञानिक तथ्य  इसके साक्षी हैं।

लेकिन मनुष्य की एक बहुत  बड़ी  दिक्कत है कि वह ईश्वर का अस्तित्व मात्र  शरीर निर्वाह, परिपोषण आदि के लिए ही मानता है। साँस लेने  के लिए  फेफड़ों का एक बहुत ही छोटा भाग काम में आता है और शेष बहुत बड़ा भाग ऐसे ही निष्क्रिय पड़ा रहता है। इसी निष्क्रिय भाग  में विषाणु पलते और प्राण संकट उत्पन्न करते हैं। चेतना का निष्क्रिय (inactive) भाग यदि स्तरीय

सक्रियता में संलग्न न होगा तो उस अँधेरी कोठरी में ऐसे तत्व पलेंगे जो पतन-पराभव के गर्त में व्यक्तित्व को गिराते रहें और सड़न उत्पन्न करके उस क्षेत्र को दुर्गन्ध से भरते रहें। लेकिन ईश्वर ऐसा होने नहीं देते। मनुष्य को जो समस्त  चेतना उपलब्ध है, शरीर निर्वाह आदि के लिए समग्र चेतना का कठिनाई से शताँश (1 /100 th पार्ट ) ही होगा। इस शतांश को minus करने के बाद जो बड़ा  भाग( शेषांश) बच जाता है उसी से मनुष्य अनजान है। यही कारण है कि मनुष्य को बार-बार उसकी क्षमता का स्मरण कराया जाता है और कहा जाता है कि जिसके शताँश से जीवनचर्या का इतना बड़ा सरंजाम ढोया, ढकेला जा रहा  है उसके शेषाँश (बड़े भाग) को भी महत्वपूर्ण समझा जाना चाहिए, असल में

वह शेषांश ही सब कुछ है जिसके कारण मानव से महामानव और देवमानव बन पाते हैं। मनुष्य की चेतना के इस major portion को नज़रअंदाज़ करने की धारणा से बाहिर निकाला जाना चाहिए। मनुष्य को एक ऐसा अवसर प्रदान करना चाहिए कि सम्पूर्ण चेतना के प्रयोग की प्रवीणता प्राप्त हो सके ताकि वह नर-पशु जैसे भव बन्धनों से निकल कर ब्रह्मचेतना के स्वच्छन्द आकाश में विचरने योग्य हो सके। ऐसी प्रवीणता प्राप्त करने पर ही मनुष्य दिव्यता का अनुभव करता है जिसे स्वर्ग लोक में निवास या जीवन-मुक्ति जैसा हाथों-हाथ रसास्वादन समझा जाता है।

मनुष्य चेतना का जो भाग परिवार, समाज के छोटे दायरों में और बहिरंग जीवन में प्रयोग होता है उससे

बहुत अधिक और व्यापक होता है overall कार्यक्षेत्र। हाड़-माँस के स्थूल शरीर की अपनी हस्ती और क्षमता है, किन्तु इससे भी महत्वपूर्ण और अदृश्य शरीर - आत्मा की उपलब्धि है और वे यदि सजग सक्रिय हो सके तो 'काय शरीर' की तुलना में अत्यधिक महत्व के काम कर सकते हैं। स्थूल शरीर बोझिल होने के कारण धीमे चलता और जल्दी थकता है, लेकिन सूक्ष्म शरीर का भार न होने से वह प्रकाश की गति (एक सेकंड में तीन लाख किलोमीटर) से भी अधिक गति के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँच सकता है।

सूक्ष्म शरीर की क्षमताएं हम जहाँ तहाँ अनेकों बार कर चुके हैं। परम पूज्य गुरुदेव ने भी स्थूल शरीर का त्याग

करते समय सूक्ष्म में विलीन होकर अधिक सक्रीय होने की बात की है।

दूरदर्शन, दूरश्रवण जैसी अनेकों आश्चर्यजनक घटनाओं के उदाहरण सामने आते रहते हैं। Radio waves, TV waves के द्वारा रिमोट दबाते ही सूक्ष्म तरंगों के माध्यम से TV में अपने मन पसंद शो आने आरम्भ हो जाते हैं। यह है सूक्ष्म तरंगों की क्षमता। भूत-प्रेतों के अस्तित्व सिद्ध करने वाले प्रमाण मिलते रहते हैं। जीवित रहते हुए तन्त्र योगी अपनी ही एक अदृश्य अनुकृति छाया पुरुष के रूप में गढ़ लेते हैं, और उससे बिना चेतन की देवमानव जैसे सहायक सेवक का काम लेते हैं। यह सूक्ष्म शरीर के ही चमत्कार हैं। कितने ही स्वप्न अक्षरशः सत्य निकलते हैं और कइयों में महत्वपूर्ण

संकेत रहते हैं। जाग्रत अवस्था में भी कई बार ऐसे दिवा-स्वप्न ( Day dreams)  देखे गये हैं जो किसी सामयिक घटनाक्रम की जानकारी देने वाले सिद्ध हुए। कारण शरीर सूक्ष्म से भी अधिक रहस्यमय है। जिस प्रकार स्थूल शरीर आधा प्रकृति का और आधा प्राणचेतना के समन्वय से बना है, उसी प्रकार कारण शरीर आधा मानवी चेतना और आधा देव चेतना के समन्वय से बना है । अन्तःकरण की सूक्ष्म परतें इसी क्षेत्र में है। यह जग पड़े तो भीतर से ही देव- शक्तियों का उदय हो सकता है।

अध्यात्म शास्त्र में अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय पंचकोशों को प्रख्यात पंच देवों का प्रतीक-प्रतिनिधि बताया गया। इसी शरीर में समस्त

लोक, देव ऋषि, तीर्थ सन्निहित माने गये हैं। बहुमूल्य रत्न भण्डारों का ख़ज़ाना  इसी में गढ़ा हुआ बताया गया है। अंतःकरण ही व्यक्तित्व का मूलभूत स्वरूप है। उसकी स्थिति जैसी भी भली-बुरी होती है। उसी के अनुरूप चिन्तन, चरित्र, व्यवहार, वातावरण गढ़ी हुई दुनिया में मनुष्य अपने ढंग का निर्वाह करता है। अंतःकरण की प्रेरणा से मन, बुद्धि को काम करना पड़ता है। मन के निर्देशन पर काया काम करती है।

संक्षेप में बाह्य जीवन का जैसा भी स्वरूप है, उसे अन्तः करण का प्रतीक- प्रतिबिम्ब ही समझा जाना चाहिए। यह अन्तराल ही कारण शरीर है।

स्थूल शरीर की क्षमता, प्रखरता के आधार पर मिलने वाली प्रसन्नता, सम्पदा, सफलता जिन्हें प्राप्त है उन्हें

उतना और भी जानना चाहिए कि स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर की सामर्थ्य में उत्तरोत्तर वृद्धि ही होती चली जा रही है। नीरोग, परिपुष्ट स्फूर्तिवान, सुन्दर, सुडौल शरीर के सहारे जो कुछ हो सकता है, उनसे अत्यधिक अनुपात में समुन्नत सूक्ष्म शरीर और सुसंस्कृत कारण शरीर के माध्यम से उपलब्ध किया जा सकता है।

***********